Knowledgeable Research – Vol.1, No.5 December 2022.

Website: https://knowledgeableresearch.com/

महर्षि दयानंद द्वारा वर्णित शिक्षण पद्धतियाँ

अरुणा जौहरी

श्री वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय,गजरौला

Arunajs84@gmail.com

****

शिक्षण विधियाँ इस प्रकार की होनी चाहिए ताकि निर्धारित लक्ष्य प्राप्त किए जा सकें | हमें किसी एक विधि का ही दास नहीं होना चाहिए । शिक्षण विधियाँ ऐसी होनी चाहियें जिससे छात्रों की आंतरिक शक्तियाँ पूर्ण रूप से विकसित हो सकें। इसके लिए प्रयोग, क्रिया तथा प्रोजेक्ट और खेल, व्याख्यान तथा तर्क विधियों का प्रयोग किया जा सकता है बहुत सी विधियाँ हैं जिनमें से हम उनका चयन कर सकते हैं, जो हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति समय पर तथा सर्वोत्तम ढंग से कर सके।

Keywords: *महर्षि दयानंद,दर्शन, शिक्षण विधियाँ, विचारधारा*

****

शिक्षण पद्धतियाँ:

भारतीय दार्शनिक विचारधारा नैतिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक मान्यताओं पर आधारित है। सभी भारतीय दर्शनों का विश्वास है कि सृष्टि में कोई ऐसी नैतिक व्यवस्था है जो प्रक्रति तथा मानव समाज में प्रबंध-व्यवस्था तथा नियंत्रण बनाये रखती है। भारतीय दर्शन में जीवन को समग्र दृष्टि से देखने की वृत्ति रही है। दर्शन के क्षेत्र में ज्ञान-मीमांसा के अंतर्गत मानव-बुद्धि ' ज्ञान और ज्ञान-प्राप्ति के साधनों की व्याख्या होती है। इन साधनों को ही विधियाँ कहते हैं। इसी के आधार पर दार्शनिक शिक्षण विधियों को निरूपित करते हैं। शिक्षा दार्शनिकों द्वारा निर्मित शिक्षण विधियों से किसको कब और किस प्रकार पढ़ाना चाहिए, इसका ज्ञान प्राप्त होता है? विधियों के आधार पर ही एक शिक्षक, शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उन उद्देश्यों के अनुरूप विधियों का चयन करता है।

सीखने का उद्देश्य स्वतंत्र चिंतन का विकास करता है। जनतंत्र की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि नागरिक सामूहिक चर्चा में दक्ष हो और चिंतन एवं तर्क की प्रणालियों में अभ्यस्त हो | चिंतन का विकास तब होता है जब बालकों पर कोई बात ऊपर से नहीं लादी जाती | बालक जब स्वयं अनुसंधान करके, प्रयोग करके सीखते है तो उससे स्वतंत्र चिंतन का अभ्यास होता है।इस प्रकार सीखना क्रिया का परिणाम है। दर्शन तथा शिक्षण-विधियों में घनिष्ठ सम्बन्ध का होना। समाज की आवश्यकता अनुसार इन शिक्षण विधियों में भी परिवर्तन आता रहता है और नई-नई विधियाँ प्रकाश में आती रहती हैं।

वास्तव में अध्यापक छात्रों को शिक्षण कराने हेतु जो विधि या ढंग अपनाता है, वह उसका अपना शिक्षादर्शन होता है। जीवन के आदर्शों को प्राप्त करने के लिए किस शिक्षण विधि का प्रयोग किया जाए, वह दर्शनशास्त्र ही बताता है। दर्शन ही पूर्व विद्यमान तथा वर्तमान शिक्षण विधियों की समीक्षा करता है। तत्पश्चात् गुण-दोषों धार पर दोषों से बचने की बात भी बताता है । दर्शन ही नवीन शिक्षण विधियों का भी निर्माण करता है ।इसलिए यह समझा गया कि अध्यापक अपने छात्रों को इस ढंग से शिक्षा दे जिससे शिष्य को पढ़ाया गया पाठ नीरस न लगे, वरन अध्यापक, शिष्य और शिक्षण प्रक्रिया के मध्य रोचकता बनी रहे ।[1]

शिक्षण विधि ऐसी न हो कि छात्र अनुकरण मात्र से सीखें और दूसरे जैसे कहें, उसे वैसा ही स्वीकार कर लें। अतः शिक्षण विधि यदि ऐसी हो जिसमें छात्र स्वयं क्रियाशील रहें तो वे स्वयंमेव सोचने को भी बाध्य होंगे। अतः स्वतंत्र चिंतन विकास के लिए विधि को क्रियाशील बनाना पड़ेगा ।[2] अध्यापक सदा छात्र के प्रति व्यावहारिक दृष्टिकोण रखता है। वह सामाजिक एवं भौतिक वातावरण में उत्पन्न होने समस्याओं के समाधान में रुचि लेता है। यदि जीवन में कोई समस्या नहीं है, वातावरण समस्या प्रस्तुत नहीं करता तो अध्यापक का कार्य निरर्थक हो जाएगा।

शिक्षण विधियाँ इस प्रकार की होनी चाहिए ताकि निर्धारित लक्ष्य प्राप्त किए जा सकें | हमें किसी एक विधि का ही दास नहीं होना चाहिए । शिक्षण विधियाँ ऐसी होनी चाहियें जिससे छात्रों की आंतरिक शक्तियाँ पूर्ण रूप से विकसित हो सकें। इसके लिए प्रयोग, क्रिया तथा प्रोजेक्ट और खेल, व्याख्यान तथा तर्क विधियों का प्रयोग किया जा सकता है बहुत सी विधियाँ हैं जिनमें से हम उनका चयन कर सकते हैं, जो हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति समय पर तथा सर्वोत्तम ढंग से कर सके।

शिक्षण-कार्य इस प्रकार का होना चाहिए जिसे पढ़कर बच्चे की स्वयं रूचि जाग्रत हो। यदि शिक्षण रुचिकर होगा तो बच्चों को इस विषय में कोई कठिनाई नहीं होगी और शीघ्र ही बच्चा उस विषय को आत्मसात कर लेगा । वह प्राथमिक स्तर पर कहानी विधि का प्रयोग करने की बात

करते थे। शिक्षा की व्यवस्था मातृभाषा के माध्यम से होनी चाहिए | बच्चों को क्रिया करने के अधिक से अधिक अवसर देने चाहिए और उन्हें स्वयं के अनुभव को सीखने देना चाहिए।

स्वामी दयानंद के अनुसार शिक्षण पद्धति:

स्वामी जी का विचार है कि संयम,नियम,आत्मसंयम,योगाभ्यास और ब्रह्मचर्य के द्वारा विद्यार्थी एवं अध्यापक शिक्षा ग्रहण करें- करायें | इससे विद्यार्थी का मन शिक्षा ग्रहण करने में केन्द्रित होगा और सफलता मिलेगी | उन्होंने आगे यह भी विचार व्यक्त किये की मन, वाणी एवं शरीर तथा वातावरण को शुद्ध करके शिक्षा कार्य प्रारंभ करना चाहिए | जहाँ तक शिक्षण विधियों का सम्बन्ध है, स्वामी जी ने विद्या प्राप्ति का क्रम और प्रकार निम्न बताये हैं-

विद्या प्राप्ति का क्रम और प्रकार

(अ) विद्या प्राप्ति का क्रम:

(प्रश्न) विद्या को किस-किस क्रम से प्राप्त हो सकता है?

(उत्तर) वर्णोच्चारण, व्यवहार की शुद्धि, पुरुषार्थ, धार्मिक विद्वानों का संग, विषयकथाप्रसंग का त्याग, सुविचार से व्याकरण आदि शब्द, अर्थ और सम्बन्धों को यथावत् जानकर उत्तम क्रिया करके सर्वथा साक्षात् करता जाय ।जिस-जिस विद्या के लिए जो-जो साधनरूप सत्यग्रंथ हैं, उन-उन को पढ़कर वेदादि पढने के योग्य ग्रंथों के अर्थों को जानना आदि कर्म शीघ्र विद्वान् होने के साधन हैं।[4]

(आ) विद्या-प्राप्ति के चार प्रकार :

(प्रश्न) विद्या किस-किस प्रकार और किन कर्मों से होती है?

(उत्तर) चतुर्भि: प्रकारेविद्योपयुक्ता भवति। आगमकालेन स्वाध्यायकालेन प्रवचनकालेन व्यवहारकालेनेति ।।

विद्या चार प्रकार से आती है-आगम,स्वाध्याय,प्रवचन और व्यवहारकाल ।

'आगमकाल'उसको कहतें हैं कि जिससे मनुष्य पढ़ानेवाले से सावधान होकर,ध्यान देकर, विद्या आदि पदार्थ ग्रहण कर सकेंI

'स्वाध्याय' उसको कहते है कि सम्बन्धों बातें जो पठन समय में आचार्य के मुख से शब्द, अर्थ और सम्बन्धों की बातें प्रकाशित हों,उनको एकांत में स्वस्थाचित्त होकर,पूर्वापर पर विचार के, ठीक-ठीक हृदय में दृढ कर सके। 'प्रवचनकाल' उसको कहतें हैं कि जिससे दूसरों को प्रीति से विद्याओं को पढ़ा सकना | 'व्यवहारकाल' उसको कहतें हैं कि जब अपने आत्मा में सत्यविद्या होती

तब यह करना,यह ना करना । वही ठीक-ठीक सिद्ध होके वैसा ही आचरण करना हो सकेI ये चार प्रयोजन हैं तथा अन्य भी चार कर्म विद्यप्राप्ति के लिए हैं-श्रवण, मनन, निदिध्यासन, साक्षात्कार।

"श्रवण उसको कहते हैं कि आत्मा मन के और मन श्रोत्र इन्द्रिय के साथ यथावत् युक्त करके ' अध्यापक के मुख से जो-जो अर्थ और सम्बन्ध के प्रकाश करने वाले शब्द निकलें, उनको श्रोत्र से मन और मनन से आत्मा में एकत्र करते जाना।

"मनन" उसको कहते हैं कि जो-जो शब्द, अर्थ और सम्बन्ध आत्मा में एकत्र हुए हैं, उनका एकांत में स्वस्थचित्त होकर विचार करना कि कौन शब्द किस अर्थ के साथ और कौन अर्थ किस शब्द के साथ सम्बन्ध अर्थात् मेल रखता और उनके मेल में किस प्रयोजन की सिद्धि और उलटे होने में क्या-क्या हानि होती है। इत्यादि ।

"निदिध्यासन' उसको कहते हैं कि जो-जो शब्द , अर्थ और सम्बन्ध सुने विचारे हैं कि ठीक-ठीक हैं वा नहीं? इस बात की विशेष परीक्षा करके दृढ़ निश्चय करना |

'साक्षात्कार' उसको कहते है कि जिन अर्थों के शब्द और सम्बन्द सुने विचारे और निश्चय किये हैं, उनको यथावत् ज्ञान और क्रिया से प्रत्यक्ष करके व्यवहारों की सिद्धि से अपना और पराया उपकार करना आदि विद्या की प्राप्ति के साधन हैं [5]

(इ) आचार्यजन क्रियात्मक पद्धति और यंत्रों आदि से शिक्षा दें I

(क) (प्रश्न) आचार्य किस रीति से विद्या और सुशिक्षा का ग्रहण करावें और विद्यार्थी लोग करें?
स्वामी जी कहते हैं—आचार्य समाहित होकर ऐसी रीति से विद्या और सुशिक्षा करें कि जिसे उसके आत्मा के भीतर सुनिश्चित अर्थ होकर उत्साह ही बढ़ता जाए I ऐसी चेष्टा वा कर्म कभी न करें कि जिसको देख वा करके विद्यार्थी अधर्मयुक्त हो जावे I

हस्तक्रिया, यंत्र, कलाकौशल, विचार आदि से विद्यार्थियों के अपने आत्मा में पदार्थ इस प्रकार साक्षात् करावें की एक के जानने से हजारों पदार्थ यथावत जानतें जाएँ Iअपने आत्मा में इस बात का ध्यान रखें कि जिस-जिस प्रकार से संसार में विद्या, धर्भाचरण की बढ़ती और मेरे पढ़ाये मनुष्य अविद्वान् और कुशिक्षित होकर मेरी निंदा के कारण ना हो जायें कि मैं ही विद्या के रोकने और अविद्या की वृद्धि का निमित्तना गिना जाऊँ।ऐसा न हो कि सर्वात्मा परमेश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव से मेरे गुण, कर्म, स्वभाव विरुद्ध होने से मुझको महादु:ख भोगना हो। परम धन्य वे मनुष्य हैं कि जो अपने आत्मा के समान सुख में सुख और दुख में दुःख अन्य मनुष्यों का जानकर धार्मिकता को कदापि नहीं छोड़ते,इत्यादि उत्तम व्यवहार आचार्य लोग नित्य करते जाएI[6]

"जिज्ञासु मनुष्यों को चाहिए कि सदैव, विद्वानों से विद्या की इच्छा पर प्रश्न किया करें कि जितना तुम लोगों में पदार्थ का विज्ञान है, उतना सब तुम लोग हम लोग में धारण करो और जितनी हस्तक्रिया आप जानते हैं, उतनी अब, हम लोगों को सिखाइए।

1.उपदेश व व्याख्या विधि (Teaching's or Lecture Method) :

स्वामी दयानंद ने अपनी शिक्षण-पद्धति में उपदेश को अधिक महत्त्व प्रदान किया | उन्होंने उपदेश विधि के सम्बन्ध में लिखा है-'द्विज अपने घर में लड़कों का यज्ञोपवीत और कन्याओं का भी यथायोग्य संस्कार करके यथोक्त आचार्य कुल अर्थात् अपनी-अपनी पाठशाला में भेज दें।' आचार्य अंतेवाणी अर्थात् अपने शिष्य और शिष्याओं को इस प्रकार उपदेश करें ...। स्पष्ट है कि स्वामी जी ने शिक्षा का प्रारम्भ उपदेश विधि से करने पर बल दिया था I आधुनिक समय की व्याख्या विधि एक प्रकार से इसी उपदेश विधि का ही रूप है।

2.स्वाध्याय विधि (Self-study Method):

स्वामी दयानंद ने स्वाध्याय का दो अर्थों में प्रयोग किया-(1) कर्तव्य के रूप में पढने का काम करना और (2) प्रयत्न के रूप में ज्ञान प्राप्ति का साधन बनाना, ताकि छात्र अपनी वुद्धि एवं शक्ति दोनों का प्रयोग कर सकें I इस संदर्भ में स्वामीजी नें अपनी 'सत्यार्थ प्रकाश' में तैत्तिरीय उपनिषद् से उद्धहरण दिया है कि अपने अध्ययन में "लापरवाही मत करो" बल्कि उसका लाभ उठाओ और ज्ञान की वृद्धि करो, तभी तो आचार्य के समान बुद्धिमान व्यक्ति जाने जाओगे ।

3. निरीक्षण विधि (Observation Method):

स्वामीजी ने अपनी शिक्षा-योजना में निरीक्षण विधि को भी महत्वपूर्ण स्थान दिया है, जिसका आज के सभी शिक्षाशास्त्री समर्थन करतें हैं उन्होंने 'सत्यार्थ प्रकाश' में इस विधि के विषय में लिखा है। जो श्रोत, त्वचा,चक्षु,जिव्हा और घ्राण का शब्द, स्पर्श रूप रस और गंध के साथ अव्यवहित अर्थात: आवरण रहित सम्बन्ध होता है, इन्द्रियों के साथ मन का और मन के साथ आत्मा का सम्बन्ध होता है, उससे ज्ञान प्राप्त होता है। उनके इस कथन से 'निरीक्षण' (Observation) एवं प्रदर्शन" (Demonstration) का संकेत मिलता है, जिनमें ज्ञानेंद्रियों के प्रयोग से संवेदन एवं प्रत्यक्षीकरण संभव होता है। अतः यह स्पष्ट है कि स्वामीजी ने प्रकृतिवादी एवं यथार्थवादी शिक्षाशास्त्रियों द्वारा बताई गई विधियों का समर्थन किया है।

4. तार्किक विधि (Logical Method) :

स्वामीजी ने तार्किक विधि के प्रयोग पर बल दिया। वैदिककाल की शास्त्राथ की परंपरा जो शिष्य की परीक्षा के लिए आवश्यक मानी जाती थी और जो तर्क विधि पर आधारित थी, का स्वामीजी ने स्वयं प्रयोग किया | इस विधि में किसी समस्या व प्रश्न को लेकर दो विद्वान पक्ष व गुरु एवं शिष्य तर्कयुक्त ढंग से अर्थात् 'आगमन एवं निगमन पद्धतियों' (Inductive and Deductive Methods) के आधार पर परस्पर विचार-विमर्श कर निष्कर्ष पर पहुँचते हैं। स्वामीजी कहते है, "तर्क के बिना कोई भी विद्या किसी मनुष्य को नहीं होती और विद्या के बिना पदार्थों से उपयोग भी कोई नहीं ले सकता।[7]

5.प्रश्नोत्तर विधिं (Question-Answer Method):

चूंकि शास्त्राथ व् तार्किक विधि में प्रश्नोत्तर विधि का अत्यधिक प्रयोग किया जाता है, अत: हम यह कह सकतें हैं कि स्वामी जी प्रश्नोत्तर विधि के प्रयोग पर भी बल देते थेI इस विधि में एक पक्ष की ओर से शंका रूप में प्रश्न होता है और दूसरे पक्ष से समाधान के रूप में उत्तर प्रदान किया जाता हैI कभी कभी ऐसा भी होता है कि उत्तर देने वाला अंत में प्रश्न उठा देता है, जिसे उत्तर पाने वाले को हल करना पड़ता हैI इस विधि का प्रयोग हमारे देश के वैदिक कालीन गुरुओं एवम् शिक्षिकों औए यूनान के विद्वानों द्वारा अत्यधिक किया जाता था

6.व्यावहारिक विधि (Applied Method):

स्वामी जी ने प्राचीन गुरुओं वा शिक्षकों के समान विभिन्न संस्कारों एवं दैनिक क्रियाओं पर भी अत्यधिक बल देकर व्यवहारिक विधि का भी प्रयोग किया Iस्वामी जी ने शिल्प विद्या पर दक्ष होने के लिए अत्यधिक जोर दिया,क्योंकि इससे व्यक्ति को 'व्यवहारिक ज्ञान'प्राप्त होता है I उन्होंने आयुर्वेद, संगीत,,विज्ञान,आदि उच्चस्तरीय विद्याओं के अतिरिक्त शारीरिक व्यायाम,खेल-कूद,गुरुसेवा कार्य आदि में निपुण होने की आवश्यकता एवं महत्त्व पर जोर दिया है जो हमें व्यवहारिक विधि द्वारा ही संभव हो सकता है I

7.संवाद विधि :

महर्षि दयानंद परस्पर संवाद को एक आवश्यक शिक्षणविधि मानते हैं। उनका मानना है, जब हम आपस में संवाद करते हैं, तो हमारे पास किसी भी विषय के लिए अनेक विकल्प उपस्थित हो जाते हैं तथा विषय के प्रति एक सोच भी मिलती है। इसलिए शिक्षण में संवाद होना अत्यंत आवश्यक है |जितना ज्यादा हम संवाद करेंगे, उतनी ही विषय में हमारी पैठ गहरी होगी | स्वामी जी ने लिखा है- 'हे स्त्रियो! तुम लोग औषधि विद्या के लिए परस्पर संवाद करो।"[8] 1. पाण्डेय डा. रामशकल : शिक्षादर्शन, 994, पृष्ठ 230.

2. विद्यावाचस्पति, इन्द्र : आर्य समाज का इतिहास (भाग-।), पृष्ठ 43.

3. श्री अरबिंदो : दी सिंथेसिज ऑफ योग, श्री अरबिन्दो लाइब्रेरी, न्यूयार्क, |950, पृष्ठ 2.

4. व्यभा, 184

5. व्यभा, 176

6. व्यभा. 178

7. यजु,भा. 856, भावार्थ

8.यजुभा. 12.88, भावार्थ पांडिचेरी

9. (पुरोधा', अप्रैल 977, पृष्ठ 1, अरविंद सोसायटी , आश्रम-2 .